



प्रियांशा त्रिपाठी

समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य का विमर्श : बदलते सामाजिक यथार्थ और अंतर्मन की पड़ताल

उन्नाव (उ०प्र०) भारत

Received-28.08.2025,

Revised-05.09.2025,

Accepted-11.09.2025

E-mail: priyanshatrpathi300@gmail.com

सारांश: समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य का प्रश्न अब केवल निजी व्यथा या मनोवैज्ञानिक असंतुलन का प्रश्न नहीं रह गया है। यह बदलते सामाजिक संबंधों, आर्थिक असुरक्षा, लैंगिक भूमिकाओं, अकेलेपन, प्रतिस्पर्धा, तकनीकी जीवन और व्यक्ति की पहचान के संकट से जुड़ा व्यापक मानवीय प्रश्न बन चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन मानसिक स्वास्थ्य को केवल मानसिक रोग के अभाव के रूप में नहीं, बल्कि ऐसी मानसिक कुशलता की अवस्था के रूप में देखता है जिसमें व्यक्ति जीवन के तनावों का सामना कर सके, अपनी क्षमताओं को पहचान सके, काम कर सके और समुदाय में योगदान दे सके। इसी व्यापक अर्थ को आधार बनाकर प्रस्तुत आलेख समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य के उभरते स्वरूप का आलोचनात्मक अध्ययन करता है। लेख में मानसिक पीड़ा को व्यक्ति की निजी कमजोरी मानने के बजाय उसके सामाजिक और सांस्कृतिक कारणों से जोड़कर देखा गया है। हिंदी कहानी, उपन्यास और कविता में अकेलेपन, असुरक्षा, स्त्री-अनुभव, युवा तनाव, पारिवारिक संवादहीनता और डिजिटल जीवन से उत्पन्न मनोवैज्ञानिक दबावों की अभिव्यक्ति को केंद्र में रखा गया है। आलेख का निष्कर्ष है कि समकालीन हिंदी साहित्य मानसिक स्वास्थ्य को 'बीमारी' की संकीर्ण सीमा से बाहर निकालकर मनुष्य की गरिमा, आत्मनिर्णय, संबंध और सामाजिक स्वीकार्यता के प्रश्न से जोड़ता है।

कुंजीशब्द— समकालीन हिंदी साहित्य, मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक पीड़ा, अकेलापन, स्त्री-अनुभव, युवा चेतना, डिजिटल जीवन।

भूमिका : मनुष्य के भीतर घटता हुआ समय— समकालीन समय को सामान्यतः तीव्र परिवर्तन का समय कहा जाता है। तकनीक ने संचार को आसान बनाया है, शिक्षा और रोजगार की संभावनाओं का विस्तार किया है और व्यक्ति को अभिव्यक्ति के अनेक मंच दिए हैं। फिर भी इस सुविधा-संपन्न संसार के भीतर एक दूसरी कहानी चल रही है कूलगाता जल्दी में रहने, पीछे छूट जाने के भय, सामाजिक तुलना, आर्थिक अस्थिरता और संबंधों में घटती आत्मीयता की कहानी। बाहरी जीवन जितना अधिक गतिशील हुआ है, व्यक्ति के भीतर उतनी ही अधिक बेचैनी दिखाई देने लगी है।

मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा को इसी संदर्भ में समझना आवश्यक है। WHO के अनुसार मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति की मानसिक कुशलता से जुड़ा है और उस पर व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक तथा संरचनात्मक परिस्थितियों का संयुक्त प्रभाव पड़ता है। गरीबी, हिंसा, असमानता और प्रतिकूल सामाजिक परिस्थितियाँ मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर कर सकती हैं। इसलिए मानसिक स्वास्थ्य को केवल चिकित्सकीय दृष्टि से देखना अधूरा होगा।

साहित्य इस अधूरेपन को पूरा करता है। वह आँकड़ों के पीछे छिपे मनुष्य को सामने लाता है। किसी पात्र का चुप हो जाना, बार-बार असफलता की स्मृति में लौटना, घर में उपस्थित होकर भी संवाद से बाहर रहना, सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप स्वयं को बदलते रहना या अपने ही जीवन के अर्थ पर प्रश्न उठाना—ये सभी अनुभव साहित्य में मानसिक संसार के संकेत बनते हैं। इसीलिए समकालीन हिंदी साहित्य का अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य के प्रश्न को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक रास्ता उपलब्ध कराता है।

प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य किसी साहित्यिक पात्र का चिकित्सकीय निदान करना नहीं है। इसका उद्देश्य यह देखना है कि रचनाकार मानसिक पीड़ा को किन सामाजिक कारणों, भाषिक संकेतों और संबंधों के माध्यम से रचते हैं तथा साहित्य इस पीड़ा के प्रति पाठक में कैसी संवेदना पैदा करता है।

1. मानसिक स्वास्थ्य : बीमारी से आगे की अवधारणा— मानसिक स्वास्थ्य को केवल बीमारी के विपरीत रख देना उसके व्यापक अर्थ को सीमित कर देता है। स्वस्थ मनुष्य वह नहीं है जिसे कभी चिंता, दुख या असफलता का अनुभव न हो; बल्कि मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति की उन क्षमताओं से भी जुड़ा है जिनके सहारे वह जीवन की सामान्य कठिनाइयों से जूझता, संबंध बनाता, निर्णय लेता और अपने जीवन को अर्थ देता है। WHO मानसिक स्वास्थ्य को इसी सकारात्मक अर्थ में मानसिक कुशलता से जोड़ता है और यह भी रेखांकित करता है कि मानसिक स्वास्थ्य पर सामाजिक तथा संरचनात्मक कारकों का प्रभाव पड़ता है।

इस दृष्टि से साहित्य में 'मानसिक स्वास्थ्य' खोजने का अर्थ केवल अवसाद या चिंता जैसे शब्दों की तलाश करना नहीं है। साहित्यिक पाठ में मानसिक संसार अधिक सूक्ष्म रूप में उपस्थित होता है। पात्र की भाषा, उसकी चुप्पी, स्मृति, आत्मसंवाद, दूसरों से दूरी और अपने अस्तित्व को लेकर उठने वाले प्रश्न मानसिक स्थिति को व्यक्त करते हैं। यही कारण है कि मानसिक स्वास्थ्य का साहित्यिक अध्ययन मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के साथ साहित्यिक संवेदना को भी जोड़ता है।

समकालीन हिंदी साहित्य में यह परिवर्तन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। पहले जिस पीड़ा को 'व्यक्तिगत' कहकर छोड़ दिया जाता था, उसके सामाजिक कारण अब अधिक स्पष्ट होकर सामने आते हैं। बेरोजगारी, लैंगिक असमानता, परिवार का दबाव, वर्गीय असुरक्षा या सामाजिक प्रतिष्ठा की चिंता व्यक्ति के मन को प्रभावित करती है। इस तरह मानसिक स्वास्थ्य का विमर्श साहित्य में सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा के प्रश्न से जुड़ जाता है।

2. अकेलापन : भीड़ के बीच व्यक्ति— समकालीन जीवन का एक बड़ा विरोधाभास यह है कि संचार के साधन बढ़ने के बावजूद भावनात्मक अकेलापन कम नहीं हुआ। साहित्य इस विरोधाभास को बहुत सूक्ष्मता से पकड़ता है। आधुनिक पात्र कई लोगों से घिरा हो सकता है, परंतु उसे अपनी बात कहने वाला व्यक्ति नहीं मिलता। इस स्थिति में अकेलापन स्थान की नहीं, संबंध की समस्या बन जाता है।

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में अकेलापन अक्सर टूटते संवाद के रूप में आता है। पति-पत्नी साथ रहते हैं पर अपने भीतर के संकट साझा नहीं करते; माता-पिता और बच्चों के बीच बातचीत होती है, लेकिन भावनात्मक निकटता नहीं बनती; युवा मित्रों के समूह में होते हुए भी अपने भविष्य को लेकर अकेला महसूस करता है। ऐसी स्थितियाँ मानसिक स्वास्थ्य को सामाजिक संबंधों से जोड़ती हैं।

अकेलेपन की साहित्यिक अभिव्यक्ति का महत्व यह है कि वह पाठक को यह सोचने पर विवश करती है कि मानसिक पीड़ा हमेशा दिखाई क्यों नहीं देती। बाहरी रूप से सफल व्यक्ति भी भीतर से असुरक्षित हो सकता है। इसलिए साहित्य मानसिक स्वास्थ्य के प्रति एक अधिक सूक्ष्म दृष्टि विकसित करता है। वह हमें व्यक्ति के व्यवहार के पीछे छिपे अनुभव को पढ़ना सिखाता है।

3. स्त्री जीवन : मौन, अपेक्षा और आत्मनिर्णय— समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री के मानसिक संसार का विस्तार स्त्री-विमर्श के साथ गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। स्त्री की मानसिक स्थिति को समझने के लिए उसके सामाजिक परिवेश को समझना आवश्यक है। घरेलू श्रम, विवाह संबंधी अपेक्षाएँ, मातृत्व की सामाजिक छवि, परिवार की प्रतिष्ठा और 'अच्छी स्त्री' के आदर्श कई बार उसकी निजी इच्छाओं को पीछे धकेल देते हैं।

स्त्री की मानसिक पीड़ा का एक महत्वपूर्ण रूप 'मौन' है। वह हमेशा खुलकर विरोध नहीं करती; कई बार उसका विरोध भीतर चलता रहता है। साहित्य इस भीतर के संवाद को भाषा देता है। समकालीन महिला लेखन में स्त्री का असंतोष केवल व्यक्तिगत शिकायत नहीं रह जाता, बल्कि वह उस व्यवस्था पर प्रश्न बन जाता है जिसमें स्त्री से निरंतर समायोजन की अपेक्षा की जाती है।

यहाँ मानसिक स्वास्थ्य का विमर्श स्त्री की स्वतंत्रता से जुड़ता है। अपनी इच्छा व्यक्त करना, 'न' कह पाना, अपने समय और श्रम पर अधिकार रखना तथा भावनात्मक संबंधों में समानता की मांग करना मानसिक स्वायत्तता के भी प्रश्न हैं। इसलिए स्त्री-केंद्रित साहित्य मानसिक स्वास्थ्य को अधिकार और गरिमा की दृष्टि से देखने की राह खोलता है।

यह भी आवश्यक है कि स्त्री की हर भावनात्मक प्रतिक्रिया को मानसिक रोग की भाषा में न बदला जाए। कई बार बेचैनी या विद्रोह किसी बीमारी का संकेत नहीं, बल्कि अन्यायपूर्ण परिस्थिति के प्रति स्वस्थ असहमति हो सकता है। साहित्य की शक्ति इसी भेद को पहचानने में है।

4. युवा मन : सफलता की दौड़ और असफलता का भय— युवा जीवन आज अवसर और दबाव दोनों का समय है। प्रतियोगिता बढ़ने के साथ सफलता की सामाजिक परिभाषा भी अधिक कठोर हुई है। परीक्षा, नौकरी, आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक प्रतिष्ठा के लक्ष्य युवा मन पर लगातार उपस्थित रहते हैं। ऐसी स्थिति में असफलता केवल एक घटना नहीं रह जाती; वह व्यक्ति को अपने मूल्य पर प्रश्न करने के लिए मजबूर कर सकती है।

समकालीन हिंदी साहित्य में युवा पात्रों की बेचैनी इसी सामाजिक दबाव की ओर संकेत करती है। वे नौकरी की तलाश में शहर बदलते हैं, परिवार की अपेक्षाओं से जूझते हैं, अपनी रुचि और उपलब्ध अवसर के बीच फँसते हैं और कभी-कभी अपने जीवन को दूसरों की उपलब्धियों से मापने लगते हैं। साहित्य इस मानसिक दबाव को 'कमजोरी' नहीं मानता, बल्कि उस व्यवस्था की ओर संकेत करता है जिसमें व्यक्ति की पहचान को उपलब्धि से बाँध दिया गया है।

डिजिटल माध्यम इस तुलना को और तीव्र कर सकते हैं। सोशल मीडिया पर दिखाई देने वाला जीवन अक्सर चयनित और संपादित होता है, फिर भी व्यक्ति उसकी तुलना अपने वास्तविक जीवन से करता है। इस अंतर से असंतोष और आत्म-संदेह पैदा हो सकता है। दूसरी ओर डिजिटल मंच अनुभव साझा करने और सहायता खोजने के अवसर भी देते हैं। इसलिए साहित्य के लिए डिजिटल संसार न तो पूर्णतः शत्रु है और न पूर्णतः मुक्ति का माध्यम; वह नए मानसिक अनुभवों का जटिल क्षेत्र है।

5. परिवार और संबंधों की बदलती संरचना— भारतीय समाज में परिवार लंबे समय से भावनात्मक सुरक्षा का प्रमुख आधार रहा है। किंतु आर्थिक गतिशीलता, रोजगार के लिए प्रवासन, एकल परिवारों का विस्तार और पीढ़ियों के बदलते मूल्य संबंधों की संरचना को बदल रहे हैं। समकालीन हिंदी साहित्य इन परिवर्तनों को केवल समाजशास्त्रीय तथ्य की तरह नहीं, बल्कि व्यक्ति के भीतर घटने वाली प्रक्रिया की तरह दर्ज करता है।

परिवार में अत्यधिक अपेक्षा भी मानसिक दबाव का कारण बन सकती है। जब प्रेम का अर्थ लगातार उपलब्धि की मांग से जुड़ जाए, तो व्यक्ति स्वयं को स्वीकार करने में कठिनाई महसूस कर सकता है। इसी प्रकार अत्यधिक नियंत्रण व्यक्ति की स्वायत्तता को प्रभावित कर सकता है। दूसरी ओर परिवार का भावनात्मक समर्थन मानसिक संकट से जूझते व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण सहारा बन सकता है।

साहित्य परिवार को एकरेखीय संस्था की तरह नहीं देखता। उसमें प्रेम और अधिकार, सुरक्षा और नियंत्रण, अपनापन और निजता के बीच लगातार तनाव रहता है। मानसिक स्वास्थ्य के साहित्यिक विमर्श की विशेषता यही है कि वह इन विरोधी भावों को एक साथ देखने की क्षमता पैदा करता है।

6. डिजिटल युग : आभासी निकटता और वास्तविक दूरी— डिजिटल जीवन ने मनुष्य के अनुभव को बदल दिया है। अब स्मृतियाँ, संबंध, बातचीत और आत्म-प्रस्तुति का बड़ा हिस्सा स्क्रीन के माध्यम से घटित होता है। इससे अभिव्यक्ति के नए अवसर पैदा हुए हैं, लेकिन साथ ही लगातार जुड़े रहने की अपेक्षा भी बढ़ी है। 'ऑनलाइन' होना कई बार उपलब्ध होने की सामाजिक बाध्यता में बदल जाता है।

समकालीन साहित्य में डिजिटल जीवन का प्रभाव धीरे-धीरे अधिक स्पष्ट हो रहा है। आभासी पहचान और वास्तविक पहचान के बीच अंतर, ऑनलाइन स्वीकृति की आकांक्षा, सूचना की अधिकता और निजी समय का क्षरण नए मानसिक अनुभव पैदा करते हैं। व्यक्ति अपनी छवि पर लगातार निगरानी रखता है और दूसरों की प्रतिक्रियाओं को अपने आत्म-मूल्य से जोड़ सकता है।

फिर भी तकनीक को मानसिक संकट का एकमात्र कारण मानना गलत होगा। मानसिक स्वास्थ्य पर अनेक व्यक्तिगत, सामाजिक और संरचनात्मक कारक एक साथ प्रभाव डालते हैं। डिजिटल मंच सहायता, जानकारी और समुदाय का साधन भी बन सकते हैं। साहित्य का कार्य इस द्वंद्व को पहचानना है— तकनीक व्यक्ति को जोड़ती भी है और कभी-कभी उसके भीतर तुलना और दूरी को बढ़ाती भी है।

7. भाषा और मौन : मानसिक पीड़ा की अभिव्यक्ति— मानसिक पीड़ा का एक बड़ा हिस्सा भाषा से बाहर रहता है। व्यक्ति कई बार अपनी समस्या को ठीक-ठीक नाम नहीं दे पाता। साहित्य ऐसी अनकही अनुभूतियों को प्रतीक, बिंब, संवाद, स्मृति और मौन के माध्यम से व्यक्त करता है। यही कारण है कि साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन के लिए केवल कथानक पर्याप्त नहीं; भाषा और शिल्प का विश्लेषण भी आवश्यक है।

किसी पात्र का बार-बार अतीत में लौटना, एक ही बात को अलग-अलग ढंग से कहना, संवाद से बचना, कमरे या शहर को विशेष अर्थ देना अथवा बाहरी घटनाओं के प्रति असामान्य उदासीनता दिखाना कृपे साहित्यिक संकेत हो सकते हैं। इन संकेतों को चिकित्सकीय लक्षण घोषित करने के बजाय साहित्यिक अनुभव के रूप में पढ़ना अधिक उचित है।

इस संदर्भ में भाषा की नैतिकता भी महत्वपूर्ण है। मानसिक संकट से गुजर रहे व्यक्ति को 'पागल', 'कमजोर' या 'असफल' जैसे अपमानजनक शब्दों में सीमित करना कलंक को मजबूत कर सकता है। WHO मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ी स्थितियों के साथ कलंक, भेदभाव और मानवाधिकार उल्लंघन को महत्वपूर्ण समस्या मानता है। साहित्य यदि व्यक्ति को उसकी गरिमा के साथ प्रस्तुत करता है तो वह सामाजिक दृष्टि में परिवर्तन ला सकता है।

8. साहित्य : उपचार नहीं, लेकिन संवेदना का माध्यम— यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि साहित्य मानसिक स्वास्थ्य संबंधी चिकित्सकीय उपचार का विकल्प नहीं है। किसी गंभीर मानसिक स्वास्थ्य स्थिति में विशेषज्ञ सहायता आवश्यक हो सकती है। साहित्य की भूमिका अलग है— वह अनुभव को समझने, भाषा देने और सामाजिक संवाद को संभव बनाने की भूमिका निभाता है।

किसी पात्र की कहानी पढ़ते हुए पाठक यह अनुभव कर सकता है कि उसके अपने प्रश्न असामान्य या अकेले नहीं हैं। इसी तरह वह किसी दूसरे व्यक्ति की पीड़ा को अपने अनुभव से अलग होकर समझ सकता है। इस प्रकार साहित्य सहानुभूति की क्षमता विकसित करता है। वह पाठक को तत्काल समाधान देने के बजाय प्रश्नों के साथ रहने और दूसरे के अनुभव को स्वीकार करने की क्षमता देता है।

मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में साहित्य की यह भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सामाजिक कलंक अक्सर व्यक्ति को बोलने से रोकता है। यदि साहित्य मानसिक संकट को मानवीय अनुभव के रूप में प्रस्तुत करे तो वह संवाद की पहली सीढ़ी बन सकता है। यही साहित्य की सामाजिक उपयोगिता है।

9. समकालीन हिंदी साहित्य की आलोचनात्मक संभावनाएँ— समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन अभी भी व्यापक संभावनाओं वाला क्षेत्र है। अब तक मानसिक पीड़ा को अक्सर मनोवैज्ञानिक या समाजशास्त्रीय दृष्टि से पढ़ा गया है; आवश्यकता यह है कि साहित्यिक शिल्प, कथन-प्रक्रिया, भाषा और पाठकीय अनुभव को भी इस अध्ययन का हिस्सा बनाया जाए।

दूसरी आवश्यकता विविध सामाजिक अनुभवों को केंद्र में लाने की है। शहर और गाँव, स्त्री और पुरुष, युवा और वृद्ध, आर्थिक रूप से सुरक्षित और असुरक्षित वर्गकृषमी का मानसिक संसार एक जैसा नहीं होता। जाति, वर्ग, लिंग, क्षेत्र और रोजगार की स्थिति व्यक्ति के अनुभव को अलग-अलग ढंग से प्रभावित कर सकती है। इसलिए मानसिक स्वास्थ्य का साहित्यिक विमर्श जितना बहुवचन होगा, उतना ही अधिक विश्वसनीय और मानवीय होगा।

तीसरी आवश्यकता यह है कि मानसिक स्वास्थ्य को केवल संकट की भाषा में न देखा जाए। स्वस्थ संबंध, आत्मसम्मान, समुदाय, रचनात्मकता, प्रकृति, श्रम और अर्थपूर्ण जीवन भी साहित्य में मानसिक कुशलता के सकारात्मक संकेत हो सकते हैं। इस तरह साहित्य केवल टूटते मन का दस्तावेज न रहकर मनुष्य के पुनर्निर्माण की संभावनाओं का भी दस्तावेज बन सकता है।

निष्कर्ष— समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य का विमर्श हमारे समय के सबसे महत्वपूर्ण मानवीय प्रश्नों में से एक को साहित्यिक भाषा देता है। यह विमर्श बताता है कि व्यक्ति की मानसिक अवस्था को उसके सामाजिक परिवेश से अलग करके नहीं समझा जा सकता। आर्थिक असुरक्षा, सामाजिक अपेक्षाएँ, लैंगिक भूमिकाएँ, पारिवारिक संबंध, प्रतिस्पर्धा और तकनीकी परिवेश मिलकर व्यक्ति के अनुभवों को आकार देते हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य की विशेष उपलब्धि यह है कि उसने मानसिक पीड़ा को अदृश्य निजी अंधकार से निकालकर सार्वजनिक संवेदना का विषय बनाया है। अकेलापन, आत्म-संदेह, अस्तित्वगत बेचैनी, स्त्री की भावनात्मक घुटन, युवा मन का दबाव और डिजिटल जीवन की जटिलताएँ साहित्य में केवल समस्याएँ नहीं हैं; वे बदलते समाज की संरचना को समझने के संकेत भी हैं।

इस विमर्श का सबसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि मानसिक स्वास्थ्य को मानवीय गरिमा से अलग नहीं किया जा सकता। किसी व्यक्ति की पीड़ा को समझना, उसकी बात सुनना और उसे कलंकित न करना केवल चिकित्सकीय नहीं, सामाजिक और नैतिक दायित्व भी है। साहित्य इस दायित्व को संवेदना में बदलता है। वह हमें यह सिखाता है कि मनुष्य को उसकी उपलब्धियों, असफलताओं या सामाजिक भूमिकाओं से अधिक व्यापक रूप में देखा जाए।

इसलिए समकालीन हिंदी साहित्य में मानसिक स्वास्थ्य का विमर्श भविष्य में और विस्तार की माँग करता है। नई रचनाओं, डिजिटल साहित्य, आत्मकथात्मक लेखन और हाशिए के अनुभवों को शामिल करते हुए इस क्षेत्र में गंभीर साहित्यिक अनुसंधान की आवश्यकता है। साहित्य मनुष्य के मन का चिकित्सक नहीं, परंतु वह उसके मौन का साक्षी अवश्य हो सकता है। और कई बार किसी मौन को भाषा मिल जाना ही संवेदना की सबसे महत्वपूर्ण शुरुआत होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. World Health Organization. Mental Health. WHO, आधिकारिक विषय-वस्तु। <https://www.who.int/en/health-topics/mental-health>.
2. World Health Organization. Mental Health – India. WHO India.
3. World Health Organization. Mental health: Promoting and protecting human rights. 2023.
- 4^प अज्ञेय. शेखर : एक जीवनी. राजकमल प्रकाशन.
- 5^प मन्नू भंडारी. आपका बंटी. राधाकृष्ण प्रकाशन.
- 6^प कृष्णा सोबती. मित्रो मरजानी. राजकमल प्रकाशन.
- 7^प निर्मल वर्मा. वे दिन. राजकमल प्रकाशन.
- 8^प मैत्रेयी पुष्पा. चाक. राजकमल प्रकाशन.
- 9^प नामवर सिंह. कविता के नए प्रतिमान. राजकमल प्रकाशन.
10. विश्वनाथ त्रिपाठी. हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास. विभिन्न संस्करण.
